वर्ष : ३६ अंक : ०१ अप्रैल २०१२ ISSN 2277 - 7865
मूल्य ५०.०० रुपये

तित्थयर

॥ जैन भवन ॥

शुभ कामनाओं सहित —

मनुष्य कर्म से ब्राह्मण, कर्म से क्षत्रिय,
कर्म से ही वैश्य और कर्म से ही शूद्र होता है।

Suvigya & Saurabh Boyed

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - ३६ अंक - ०१ अप्रैल २०१२

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिय

पता - Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007

Phone : (033) 2268-2655, 2272-9028,

Email : jainbhawan@bsnl.in

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें --

Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007

Life Membership : India : Rs. 5000.00. Yearly : 500.00

Foreign : $ 500

Published by Dr. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655 and printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street Kolkata - 700 007 Phone : 2241-1006

संपादन

डॉ. लता बोथरा

॥ जैन भवन ॥

अनुक्रमणिका

क्र. सं. लेख	लेखक	पृ. सं.
१. अष्टापद	डॉ. लता बोथरा	५

ISSN 2277 - 7865

कवरपृष्ठ : एलोरा की गुफा में उत्कीर्ण देवी अम्बिका की मूर्ति।

Composed by:

Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

अष्टापद

8वीं शताब्दी के क्रान्तिकारी विचारक वाल्तयर ने भारत के विषय में लिखा था कि– "If India whom the whole world need and who alone needs no one, much by that very fact be the most anciently civilized land. She must therefore have had the most ancient form of religion." इस धर्म का प्राचीनतम स्वरूप क्या था यह जानने के लिये हमें प्रागैतिहासिक काल से छः सौ ई. पूर्व से प्राप्त सूचनाओं और सामग्री का तुलनात्मक विवेचन करना पड़ेगा। जिन राजाओं और सम्राटों का पौराणिक साहित्य में वर्णन मिलता है वह श्रमण संस्कृति के थे। उदाहरण के रूप में आदि तीर्थंकर ऋषभदेव और उनके पुत्र भरत चक्रवर्ती जिनके नाम से यह भूमि भारत वर्ष कहलायी। उनका वर्णन शिव पुराण, नाग पुराण, मार्कण्डेय पुराण, कुर्म पुराण, वायु पुराण, ब्रह्म पुराण, वराह पुराह, विष्णु पुराण, स्कन्द पुराण और लिंग पुराण आदि में प्रत्यक्ष रूप से मिलता है। भरत के बाद दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ भगवान के समय सगर चक्रवर्ती हुए थे। जिनकी मान्यता हमें पुराण साहित्य में भी मिलती है। भगवान् पार्श्वनाथ के समय में अन्तिम चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त हुए थे। चक्रवर्ती परम्परा में 12 चक्रवर्ती राजाओं के उल्लेख हैं जो श्रमण संस्कृति के थे। ये चक्रवर्ती राजा पृथ्वी खण्ड के थे जिसकी एक निश्चित सीमा होती थी। लेकिन तीर्थंकर धर्म चक्रवर्ती होते है जिनका तीनों लोकों में प्रभुत्व होता था या यों कह सकते है कि तीर्थंकरों का शासन तीनों लोकों में रहता है और उनकी कोई निश्चित सीमा नहीं होती है।

आज से दस वर्ष पूर्व तक हड़प्पा और मोहनजोदड़ों की सभ्यता 2500 से 3000 ईसा पूर्व की मानी जाती थी। इसी आधार पर कुछ इतिहासकारों ने महाभारत का काल 1500 ई. पूर्व और कुछ ने 1000 ई. पूर्व माना है। हड़प्पा-मोहनजोदड़ो में मिली नग्न कायोत्सर्ग मूर्तियाँ

तथा कुछ सीलें स्पष्टतः श्रमण संस्कृति को इंगित करती है। प्रो. रमा प्रसाद चंद, डॉ. राधा कुमुद मुखर्जी, रामधारी सिंह दिनकर के विवरण इस विषय में हमारी बात की पुष्टि करते है। इतिहासकारों के कथनानुसार यदि महाभारत का काल 1500 और 1000 ई. पू. माना जाय तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता रामायण और महाभारत से प्राचीन है और वहाँ से प्राप्त श्रमण संस्कृति के अवशेष यह भी सिद्ध करते है कि उसके बाद रामायण और महाभारत के काल में अवश्य ही श्रमण संस्कृति का ही प्रभुत्व था। यदि रामायण और महाभारत काल हड़प्पा संस्कृति के समकक्ष या पहले के होते तो हड़प्पा संस्कृति में रामायण और महाभारत के चिन्ह अवश्य ही मिलते। प्रसिद्ध भाषाविद् डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी का यह कथन इस सन्दर्भ में बहुत महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है—

"Myths and legends of Gods and heroes current among the Austrics and Dravidians, long attending the period of Aryans advent in India (1500 B.C.), appeared to have been rendered in the Aryan Language in late and garbled or improved version according to themselves to Aryan Gods and heroes of the world and it is these myths and legends to Gods and sages which we largely find in Puranas". पुराण साहित्य में जहाँ भी क्षत्रिय राजाओं का वर्णन आया है वह सब श्रमण संस्कृति के थे क्योंकि क्षात्र धर्म का प्रारम्भ ऋषभदेव ने किया था जिसका उल्लेख महाभारत के शान्तिपर्व तथा ब्रह्मपुराण में है। इस प्रकार आदि सनातन धर्म के प्रणेता आदि तीर्थंकर ऋषभदेव थे जिनकी मान्यता हमें सभी प्राचीन संस्कृतियों में मिलती है। आदिनाथ ऋषभदेव धर्म के आदि स्वरूप थे ऐसा भागवत पुराण में भी लिखा है—

महर्षिः तस्मिन्नैव विष्णुदत्तः भगवान परमर्षिभिः प्रसादितः नाभेः प्रिवंचिकीर्षया तदवरोधायने मरुदेव्याधमान् दर्शयितुकामो वातरशनानां श्रमणः नामृषीणामूर्ध्वमंथिनां शुक्लया तनुवावतार।।

(5।3।20 भागवत)

अर्थात्– हे परीक्षित! उस यज्ञ में महर्षियों द्वारा इस प्रकार प्रसन्न किये जाने पर भगवान महाराजा नाभि का प्रिय करने के लिये उनके अन्तःपुर में महारानी मरुदेवी के गर्भ से वातरशना (योगियों) श्रमणों और उर्ध्वगामी मुनियों का धर्म प्रकट करने के लिये शुद्ध सत्त्वमय शरीर से प्रकट हुए।

ऋषभ का एक अर्थ धर्म भी है। भागवत में लिखा है– 'मेरा यह शरीर दुर्विभाव है, मेरे हृदय में सत्त्व का निवास है, मैने धर्म स्वरूप होकर अधर्म को पीछे धकेल दिया है अतएव मुझे आर्य लोग ऋषभ कहते हैं।'

इदं शरीरं मम दुर्विभाव्यं, सत्त्वं ही मे हृदयं यत्र धर्मः।
पृष्टे कृतो मे यद्धर्म आराधतो ही मां ऋषभं प्राहुरार्याः।।

(भागवत 5।5।9)

अर्थात्–एक स्थान पर परीक्षित ने कहा है– हे धर्मतत्त्व को जानने वाले ऋषभदेव! आप धर्म का उपदेश कर रहे हैं। अवश्य ही आप वृषभरूप में स्वयं धर्म है। अधर्म करने वाले को जो नरकादि स्थान प्राप्त होतें हैं, वे ही आपकी निन्दा करने वाले को मिलते हैं। यथा–

धर्मब्रवीषी धर्मज्ञ धर्मोसि वृषभ रूप धृक्।
यद्धर्मकृतः स्थानं सूचकस्यापि तद्भवेत।।

(भागवत 1।11।22)

आदि धर्म के प्रणेता ऋषभदेव का निर्वाण अष्टापद (कैलाश) में हुआ था अतः अष्टापद का निर्वाण स्थल मानवजाति की एक ऐसी धरोहर है जो समस्त प्राचीन संस्कृतियों को एक सूत्र में बांधे रखने में सक्षम है। इसके साथ ही वह उनके मेल का अद्भुत प्रतीक है। सिर्फ कैलाश ही एक ऐसा तीर्थ क्षेत्र है जो सभी धर्मों का श्रद्धा केन्द्र है, सभी धर्मों के लोग वहाँ जाते हैं और अपनी श्रद्धा वहाँ अर्पण करते हैं। The Throne of The God में Amorld Heim and August Gansser ने लिखा है–

The fundamental idea of Asiatic religions is embodied in one of the most magnificent temples I have ever seen, a sunlight temple of rock and ice. Its remarkable structure, and the pecu-

liar harmony of its shape, justify my speaking of Kailas as the most sacred mountain in the world. Here is a meeting-place of the greatest religions of the East.

पश्चिमी देशों के लोग भी कैलाश को अत्यन्त पवित्र मानते हैं। इस विषय से सम्बन्धित प्रश्न का उत्तर खोजने में Bruno Baumann जिन्होंने अनेकों बार कैलाश की यात्रा की है। उन्होंने कैलाश के विषय में कहा है कि— "I regard Kailash and the region around spiritually as one of the most powerful places on earth and I feel a need to expose myself to that sacred energy. It is important for me to be in touch with this, it enlightens me and bring me closer to my goal in life."

प्रसिद्ध रूसी चित्रकार N. Roerich ने अपने जीवन के कई महत्त्वपूर्ण वर्ष इस क्षेत्र में बिताये। उनका बनाया खूबसूरत चित्र The path to Kailash न्यूयार्क के म्यूजियम में देखा जा सकता है।

कैलाश को सभी धर्म में चाहे वह वैदिक हो, वोन्पो हो, जैन हो या बौद्ध। क्या कारण है कि सभी ने अपने तीर्थ क्षेत्र के रूप में उसे स्वीकार किया है? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है जिसका उत्तर हमें उन धर्मों के प्राचीन इतिहास में जाने से ही स्पष्ट होता है।

जैन साहित्य के अनुसार भगवान ऋषभदेव ने सर्वज्ञ होने के पश्चात् आर्यावर्त्त के समस्त देशों में विहार किया, भव्य जीवों को धार्मिक देशना दी और आयु के अन्त में अष्टापद (कैलाश पर्वत) पहुँचे। वहाँ पहुँचकर योगनिरोध किया और शेष कर्मों का क्षय करके अक्षय शिवगति (मोक्ष) प्राप्त की। नाग पुराण का यह श्लोक–

दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुरनमस्कृतः।
नीतित्रयस्य कर्ता यो युगादौ प्रथमो जिनः।।
सर्वज्ञः सर्वदर्शी च सर्वदेवनमस्कृतः।
छत्रत्रयीभिरापूज्यो मुक्तिमार्गमसौ वतन्।।
आदित्यप्रमुखाः सर्वे बद्धाञ्जलिभिरीशितुः।
ध्यायन्ति भावतो नित्यं यदंघ्रियुगनीरजम्।।

कैलासविमले रम्ये ऋषभोयं जिनेश्वरः।

चकार स्वावतारं यो सर्वः सर्वगतः शिवः।। –श्री नागपुराण

अर्थात् वीर पुरुषों को मार्ग दिखाते हुए सुर-असुर जिनको नमस्कार करते हैं जो तीन प्रकार की नीति के बनाने वाले हैं, वह युग के आदि में प्रथम जिन अर्थात् आदिनाथ भगवान् हुए, सर्वज्ञ (सबको जानने वाले), सबको देखने वाले, सर्व देवों के पूजनीय, मोक्षमार्ग का व्याख्यान कहते हुए, सूर्य को प्रमुख रखकर सब देवता सदा हाथ जोड़कर भाव सहित जिसके चरणकमल का ध्यान करते हैं ऐसे ऋषभ जिनेश्वर निर्मल कैलाश पर्वत पर अवतार धारण करते हुए जो सर्वव्यापी हैं और कल्यांणरूप हैं।। इसके अलावा लगभग सभी पुराण ऋषभदेव की प्रामाणिकता को स्वीकार करने के साथ-साथ ऋषभदेव का निर्वाण कैलाश में हुआ था यह भी स्पष्ट करते हैं। कैलाश और अष्टापद एक ही है इसकी मान्यता की पुष्टि करते हैं।

आज जब कभी भी अष्टापद का वर्णन आता है तो एक जिज्ञासा सभी के मन में उठती है कि ये तीर्थ कहां पर है, कैसा है, इसको लुप्त क्यों माना गया है। मैने अपने इस शोध निबन्ध में इन जिज्ञासाओं का समाधान करने का एक प्रयास किया है।

कुछ समय पूर्व अष्टापद से संबन्धित सभी साहित्यिक तथ्यों का संकलन जैन सेन्टर ऑफ अमेरिका (न्यूयार्क) से प्रकाशित किया गया जो आज हमारे सामने है। सन् 2006 में मुझे कैलाश जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह एक तीर्थ यात्रा नहीं थी अपितु आदि तीर्थंकर ऋषभदेव के निर्वाण स्थान अष्टापद की खोज यात्रा थी। इस दुर्गम तथा अद्‌भुत यात्रा के प्रारम्भ में अष्टापद और कैलाश के संदर्भ में कुछ प्रश्न मन में थे जिनके परिप्रेक्ष्य में उस जगह का अवलोकन करना था। श्रद्धा, विश्वास और भक्ति के साथ-साथ एक शोध दृष्टि की भी आवश्यकता थी। समय की सीमा एवं मौसम इत्यादि दूसरी अनेक कठिनाईयों के चलते यह पूर्णरूप से संभव नहीं हो पाया था। फिर भी कुछ बाते सामने आयी जिनकी चर्चा आवश्यक है।

अष्टापद के विषय में विभिन्न शास्त्रों में भिन्न-भिन्न समय में भिन्न-भिन्न महापुरुषों द्वारा रचित वर्णनों में अष्टापद का कैलाश के रूप में वर्णन मिलता है वहीं स्वयं में एक पुष्ट प्रमाण है क्योंकि यदि यह वर्णन काल्पनिक होता तो एक व्यक्ति की कल्पना में होता सभी की कल्पना एक ही तरह की कैसे हो सकती है? तीसरी, चौथी और छठी शताब्दी में निर्मित इलोरा की सोलह और तीस नम्बर की गुफाएँ जिन्हें बड़ा कैलाश और छोटा कैलाश कहा जाता है, इस बात का जीवन्त प्रमाण है कि ये गुफाएँ कई शताब्दियों तक हमसे ओझल थी। लगभग डेढ़ सौ साल पहले ही हमें इनका पता चला है। अभी तक समस्त जैन वाङ्मय में, स्वामी आनन्द भैरवगिरि ने, स्वामी प्रणवानन्दजी ने, सहजानन्दजी महाराज के उल्लेखों में कैलाश को ही अष्टापद कहा गया है। अभिधान चिन्तामणि में कैलाश के चार नाम मिलते हैं। (1) रजताद्र (2) कैलाश (3) अष्टापद (4) स्फटिकाचल। कैलाश और अष्टापद दोनों का एक ही पर्यायवाची अर्थ है स्वर्ण या सोना। प्राकृत भाषा में अष्टापद को **अट्ठावय** कहा गया है जिसका अर्थ भी स्वर्ण होता है। सूर्य की किरणें जब कैलाश या अष्टापद पर पड़ती है तो वह स्वर्ण की भांति चमकती है। पुराणों में भी ऋषभदेव का निर्वाण कैलाश में हुआ ऐसा वर्णन है।

अष्टापद की विलुप्ति और कैलाश शब्द का प्रचलन इसकी झलक ऐतिहासिक विवरणों से मिलती है। एक समय ऐसा आया जब सब लोग यह मानने लगे थे कि अष्टापद आलोक हो गया है और कैलाश विराजमान है। जहाँ अष्टापद से ऋषभदेव को याद करते थे, वहीं अब कैलाश को शिव के रूप में देखने लगे, ऐसा कब से हुआ, इसका उद्देश क्या था? यह गहन शोध का विषय है।

सन् 2006 में जब हम कैलाश यात्रा पर गये तब हमारी जानकारी बहुत सीमित थी। आस्था और विश्वास भी उतना पक्का नहीं था। वहाँ सबकुछ इतना अद्भुत था कि देखते ही रह गये। वस्तु स्थिति का चिन्तन नहीं कर पाये। वहाँ से आने के बाद सन् 2007 और 2009 में दो दल वहाँ गये उनकी रिपोर्ट एवं उसके आलोचनात्मक अध्ययन से जो जानकारी हमें मिली उसके अनुसार आज का कैलास ही अष्टापद है इसी की पुष्टि होती है। जैन प्राचीन आगम साहित्य के सूत्रकृत्तांग सूत्र में वर्णन है कि ऋषभदेव

ने अष्टापद पर अपने पुत्रों को प्रतिबोधित किया था एवं उनका निर्वाण अष्टापद पर हुआ था। यह भी इतिहासिक तथ्य है कि प्राचीन साक्ष्यों को मिटाने एवं अपना बनाने के लिये उन्हें नये नाम दिये जाते रह हैं जिसके सैकड़ों प्रमाण हमारे पास उपलब्ध है। अष्टापद तीर्थ का महत्व कम करने के लिये एवं उसे अपना साबित करने के लिये परवर्ती काल में ब्राह्मणों ने उसे कैलाश का नाम दिया। ऋषभदेव के निर्वाण के पूर्व वह पूरी पहाड़ी शृंखला अष्टापद थी उनके निर्वाण के पश्चात् उनकी स्मृति में जो स्तूप बना वहीं बाद में कैलाश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रकार ऋषभदेव स्वामी के निर्वाण भूमि की स्मृति कैलाश के नाम से परवर्ती काल में जीवन्त रही। कैलाश यात्रा के तीसरे चरण में डॉ. वेलेजा की रिपोर्ट के कुछ अंशों को मैं यहाँ उद्धृत कर रही हूँ जो अष्टापद की खोज की दिशा में बहुत ही महत्वपूर्ण है। The earliest archaeological horizon detectable at Mount Kailas belongs to the so-called Zhang Zhung civilization, a broadly defined cluster of cultural orders spanning the first millennium BCE and first millennium CE over a large area of Upper Tibet.

The most salient physical feature of the Zhang Zhung civilization at Mount Kailas in the remains of an extensive network of all stone covelled residences known in the native parlance as dokhong These are among the highest archaeological remains found anywhere in Upper Tibet. They also constitute the loftiest permanent residence built anywhere in the world, past or present. An impressive physical feat to be certain.

The south side of Mount Kailas also receives maximum solar exposure, a key natural endowment in a brutally cold climate. Moreover, there are a surprising number of cave sites, valley branches, flats, and water sources lying in the lap of the mountain fit for human habitation.

इन विवरणों के अनुसार कैलाश के स्तूप के समीप में बहुत ही सुसंस्कृत सभ्यता विद्यमान थी जिसे ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी में बौद्धों

ने अपने प्रभाव में कर लिया। डॉ. वेलेजा ने इनको बॉनपो धर्म से या जॉग-जुग सभ्यता से युक्त किया है। यदि यह मानकर चले तो यह प्रश्न मन म सहज ही उठता है कि बॉनपो से पूर्व यहाँ जो लोग थे वह कौन थे और किस संस्कृति के थे। इसके लिये वहाँ के इतिहास पर एक दृष्टि डालना आवश्यक है जिससे धुँधली पड़ी तस्वीर स्वतः ही स्पष्ट हो जायेगी। बॉनपो से पूर्व यहाँ लिच्छवी जाति के राजाओं का शासन था। मनु स्मृति में इन्हें व्रात्य क्षत्रिय कहा गया है। पूर्वी भारत की प्राचीन ऐतिहासिक परम्परा के सूत्रधार ये व्रात्य क्षत्रिय थे जो श्रमण या निर्ग्रन्थ परम्परा के वाहक रहे। विश्व प्रसिद्ध वैशाली गणतंत्र के प्रमुख चेटक लिच्छवी जाति के थे जो चौबीसवें तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर के मामा थे। अतः महावीर का इस जाति से रक्त संबंध था। वैशाली गणतंत्र के लोगों जिनमें लिच्छवी प्रमुख है के विषय में गौतम बुद्ध ने कहा था कि स्वर्ग के देव देखने हो तो वैशाली के पुरुषों को देखों और देवियाँ देखनी हो तो वैशाली की महिलाओं को देखो। प्रागैतिहासिक काल में लिच्छवी जाति के लोग पहाड़ों से नीचे आये और इनकी एक शाखा ईरान के निशिविष में जाकर बस गयी। जैन साहित्य में बहुत ही स्पष्ट रूप से वर्णित है कि लिच्छवी लोग अर्हत उपासक थे और स्तूप की पूजा करते थे। छः सौ ई. पूर्व वैशाली में मुनि सुव्रत स्वामी का स्तूप था जिसे नष्ट किया गया। कैलास के स्तूप की पूजा की परम्परा और वैशाली में मुनि सुव्रत स्वामी के स्तूप की पूजा में जो साम्य है वह तिब्बत के लिच्छवी तथा वैशाली के लिच्छवियों के सम्बन्ध को पुष्ट करता है। आवश्यकनिर्युक्ति में स्तूप के लिये थुम्बा का उल्लेख है और जिसे तिब्बती भाषा में स्तुम्पा कहा गया है। ये शाब्दिक मेल भी इनके संबंधों को प्रकट करता है। अतः पश्चिमी तिब्बत में कैलाश का क्षेत्र व्रात्य क्षत्रियों के अधीन था। उसके बाद बॉनपो लोग जिनका मूल स्थान ईरान था वहाँ आकर लिच्छवियों में घुल-मिल गये। इसी कारण बॉनपो दर्शन में निर्ग्रन्थ धर्म की छाप का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

'Pag-Sam-Jan-Zang', 'Gyalrab sal-wahi-me-long' तथा दूसरी तिब्बती किताबों में लिखा है कि तिब्बत के प्राचीन राजा लिच्छवी

वंश के थे। The earliest kings of Tibet from 'Nya-thi-tsau-po' downward belong to the 'li-tsa-bgi-race'. There is no doubt that 'li-tsa-bgi' is only modified from of 'Licchavi', the first king of Tibet was 'Nya-thi-tsan-po' who was wandered from a foreign country. अतः Zang-Zung सभ्यता में वैशाली गणतन्त्र से सम्बन्ध अवश्य ही रहा होगा और भगवान महावीर का भी।

आज से लगभग 2600 वर्ष पूर्व अष्टापद के संदर्भ में भगवान् महावीर ने गणधर गौतम को बताया था कि जो अपने तप के बल से अष्टापद की यात्रा करेगा वह निश्चित ही इसी भव में मुक्ति प्राप्त करेगा यह सुनकर गौतम स्वामी ने अष्टापद की यात्रा की और वहाँ पर कण्डरिक--पुण्डरिक अध्ययन की रचना करके वज्रस्वामी के जीव को प्रतिबोधित किया--

वयरसामि नउ जीव, तिर्यग् जृम्भक देव तिहां,
प्रतिबोध्या पुंडरिक, कंडरीक अध्ययन भणो।

उसी रात्रि में वज्रस्वामी का जीव जो उस समय तिर्यग् जृम्भक देव था, वह ध्यानावस्थित गौतम स्वामी के निकट आया और गौतम स्वामी ने पुण्डरीक-कण्डरीक की कथा के माध्यम से उसे प्रतिबोधित किया। ठीक इसी प्रकार कुछ परिवर्तन के साथ ब्रह्म पुराण में भी गौतम ऋषि के कैलाश जाने और वहाँ पर उमा-महेश्वर स्तवन की रचना का उल्लेख मिलता है जो इस प्रकार है।

गौतमकृतमुमामहेश्वरस्तवन :

कैलाशशिखरं गत्वा गौतमो भगवानृषिः ।
किं चकार तपो वाऽपि कां चक्रे स्तुतिमुत्तमाम् ।1
गिरिं गत्वा ततो वत्स वाचं संयम्य गौतमः ।
आस्तीर्य स कुशान्प्राज्ञः कैलासे पर्वतोत्तमे ।2
उपविश्य शुचिर्भूत्वा स्तोत्रं चेदं ततो जगौ ।
अपतत्पुष्पवृष्टिश्च स्तूयमाने महेश्वरे ।3
भोगार्थिनां भोगमभीप्सितं च, दातुं महान्त्यष्टवपूंषि धत्ते ।
सोमो जनानां गुणवप्तिनित्यं, देवं महादेवमिति स्तुवन्ति ।4

कर्तु स्वकीयैर्विषयैः सुखानि, भर्तु समस्तं सचराचरं च।
सपत्तये ह्यस्य विबृद्धये च, महोमयं रूपमितीश्वरस्य ।5
सृष्टेः स्थितेः संहरणाय भूमेराधारमाधातुमपां स्वरूपम् ।
भेजे शिवः शान्ततनुर्जनानां, सुखाय धर्माय जगत्प्रतिष्ठितम् ।6
कालव्यवस्थाममृतस्त्रवं च, जीवस्थितिं सृष्टिमथो विनाशनम् ।
कर्तु प्रजानां सुखमुन्नतिं च, चक्रेऽर्कचन्द्राग्निमयं शरीरम् ।7

श्री नारदजी ने कहा—भगवान गौतम ऋषि ने कैलाश के शिखर पर पहुँचकर क्या किया था? क्या कोई वहाँ पर उन्होंने तपस्या की थी अथवा कौन सी उत्तम स्तुति की थी? ।1। श्री ब्रह्माजी ने कहा-—हे वत्स! फिर उस कैलाश पर जाकर उस गौतम ने वाणी का सर्व प्रथम संयम किया था। फिर उस पर्वतों में परम श्रेष्ठ कैलाश पर उस परम प्राज्ञ गौतम ने कुशाओं को फैला दिया था। उस स्थल पर वह उपविष्ट हो गये और पवित्र होकर उन्होंने इस नीचे बताये जाने वाले स्तोत्र का गान किया था। इस प्रकार से महेश्वर प्रभु की स्तुति करने पर नभोमण्डल से पुष्पों की वृष्टि हुई थी ।2-3। गौतम ने इस प्रकार से महेश्वर की स्तुति करते हुए कहा— हे भगवन् ! आप भोगों के अभिलाषा रखने वाले अपने भक्तों को उनका अभीष्ट भोग प्रदान करने के लिए महान् आठ वपुओं को धारण किया करते हैं। आप उमादेवी के सहित अपने जनों के लिए ही नित्य उन गुणों से युक्त आठ शरीरों को धारण करते हैं। सभी उनका देव-महान देव है- ऐसा स्तवन किया करते हैं ।4। आप अपने विषयों के द्वारा सुखों का संबंधन करने के लिए तथा इस सम्पूर्ण चराचर विश्व का भरण करने के वास्ते और इस विश्व की सम्पत्ति एवं विशेष वृद्धि के लिये ईश्वर आपका यह महीमय ही स्वरूप है ।5। शिव प्रभु सृजन-स्थिति-और संहार के लिये भूमि के आधार को रखने के वास्ते आप जल के स्वरूप को धारण किया करते हैं। शान्त स्वरूप वाले भगवान शिव अपने भक्तजनों के सुख तथा धर्म के लिए ही जगत् में प्रतिष्ठित रहा करते हैं ।6। इस काल की व्यवस्था को-अमृत के श्रवण की-जीवों की स्थिति-सृष्टि और विनाश-प्रजाओं को आनन्द-सुख और उंन्नति को आपका चन्द्राग्निमय शरीर किया करता है ।7।

इस विवरण से यह स्पष्ट होता है कि पुराण के गौतम ही भगवान महावीर के प्रथम गणधर गौतम स्वामी थे जिन्होंने अष्टापद (कैलाश) की यात्रा की थी। भगवान महावीर के निर्वाण के बाद गौतम स्वामी ने कहाँ-कहाँ विचरण किया इसका उल्लेख हमारे पास नहीं है। कर्नल टॉड ने लिखा है कि जो गौतम स्कैनडेनिविया गये थे वो महावीर के शिष्य गौतम थे। डॉ. वेलेजा की रिपोर्ट में कैलाश पर Zang-Zung संस्कृति के अवशेषों का उल्लेख इस बात को और भी पुष्ट करता है कि Zang-Zung संस्कृति लिच्छवीं संस्कृति का ही तिब्बती संस्करण है। तिब्बत में कैलाश के आस पास जो जातियाँ आज निवास करती है उनका चेहरा, कद काठी आदि देखने से पता चलता है कि ये लोग भारत के बिहार प्रान्त से वहाँ जाकर बसे थे तथा इनमें लिच्छवियों के साथ-साथ मागधी भी है। चौथी शताब्दी में चन्द्रगुप्त प्रथम की रानी कुमारदेवी नेपाल के लिच्छवी वंश की राजकुमारी थी।

तिब्बत और चीन के प्राचीन राजवंशों में गहरा सम्बन्ध रहा है। टी.टी. मोह के अनुसार तिब्बत में 14th century B.C. में जियान लोग रहते थे। जियान शब्द जिन का ही पर्यायवाची है। चीन के इतिहास में जिनवंश के राजाओं ने वहाँ शासन किया था। आज से चौदह सौ वर्ष पूर्व के मन्दिरों में जो इसी राजवंश के राजाओं ने बनाये थे के प्रमुख हॉल का नाम महावीर हॉल हैं। भाषा और क्षेत्र विशेष से देखें तो Jian और Zang शब्द का मूल एक ही प्रतीत होता है और इनके सम्पर्क भारत से बराबर रहे हैं।

सातवीं शताब्दी में चीनी यात्री ह्वेनसांग भारत आया था। वे दो वर्ष काश्मीर में रहा परन्तु कैलाश या तिब्बत की तरफ नहीं गया इसका क्या कारण है ये विचारणीय है। सातवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में तिब्बत में बौद्धों का वर्चस्व बढ़ने के कारण लिच्छवीं जाति का प्रभाव पश्चिमी तिब्बत में सिमट कर बारहवीं शताब्दी तक बना रहा। उसके बाद धीरे-धीरे कम होता गया।

इस प्रकार ऋषभदेव स्वामी से महावीर स्वामी के समय तक इस क्षेत्र में अर्हत् संस्कृति का व्यापक प्रभाव विद्यमान था यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

कैलाश यात्रा के दौरान हमने कुछ तिब्बती किताबें व साहित्य मिला जिसके अनुवाद से कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य सामने आये। Gangkare Teashi (White Kailas) नामक किताब में स्पष्ट लिखा है कि बौद्ध धर्म से पूर्व जैन इस क्षेत्र में रहते थे जिनका Gyal Phal Pa And Chear Pu Pa बोला जाता था। उनके प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ थे और अन्तिम तीर्थंकर महावीर। इसी किताब में ऋषभदेव के पुत्र भरत और बाहुबली का उल्लेख आता है और सबसे महत्त्वपूर्ण वर्णन 20वें तीर्थंकर मुनि सुव्रत स्वामी का कैलाश में आकर अपने हजारों शिष्यों के साथ तपस्या करने का मिलता है। यह एक बहुत महत्वपूर्ण विवरण हैं जो हमारे तीर्थंकरों की ऐतिहासिकता को भी पुष्ट करता है।

इस किताब के अनुसार—

* Before Budha in this region Jains were here.
* Digamber Chear Pu Pa were here and they consider sky as their cloth. They believe in Paap - Punya And Theory of Karma.
* Other Chear Pu Pa covered their body with that way Goe Tsen i.e. white clay.
* Other Jains came later on with white cloths.
* This Religion is well before Budhism on this earth.
* In begining Jain Lords were (Gods) 25.
* The first God name is KHYU Chok i.e. Lord Rishabh nath (Rushya nath)
* The last God name is PHEL WA i.e. Lord Mahavir.
* Lord Mahavir and Lord Budha are in same period.
* Both had interactions discussions about religion.
* Jains were practising kashta to get dissolved old karmas.
* First Lord of Jain religion Rishabhnath practised Tapasya at mt. Kailas.
* A little away from Mt. Kailas he attained nirwan (salva tion) in a cave.

* That cave is known as Ashtapad

i.e. Sangye Shhuk Thi

i.e. yen lak Geden Na Gyad Den

i.e. Eight throne

i.e. Ashtapad temple

* His elder son 'phoo' Bharat
* He became very famous king.
* 'Gyagar' i.e. India country name Bharat because of him.
* His brother 'Zrebobhalee' and other brothers, sisters, monks did Tapasya at kailas.
* Lord Munisuvrat nath (in Tibetan text also Munisuvrat nath), the 20th Lord of Jain practised Tapasya alongwith thousands and lacs of his monk.
* Rakshash Raaja's enemy Raja 'Wali' (Bali) also did tapasya here under Lord Munisuvratnath 'nishra'.

इसी किताब के अनुसार ऋषभदेव ने कैलाश के पास एक गुफा में तपस्या की थी। अष्टापद खोज यात्रा के तीसरे चरण में कैलाश के बेस पर एक गुफा तक हमारे दल के लोग पहुँचे जिसे 13 ड्रिगुंग कहा जाता है क्योंकि यहाँ तेरह छोटे-छोटे स्तूप बने हुए हैं। इन स्तूपों पर तीर्थंकर मूर्ति तथा लेख है जो अभी पढ़े नहीं गये हैं। मैक्सिकों के प्राचीन स्तूपों, मिस्र के पिरामिडों और सारनाथ के स्तूपों की कुछ सामान्य विशेषताएं हैं। प्रथम यह स्तूप किसी महान व्यक्ति की यादगार में बनाये जाते थे एवं उनकी चिता के अवशेषों पर इनका निर्माण भी किया जाता था। उदाहरण के रूप में बुद्ध के अग्नि संस्कार की राख को चौरासी भागों में विभाजित कर उनके ऊपर स्तूप बनाये गये थे ऐसा उल्लेख मिलता है। इन स्तूपों के नीचे अन्दर की तरफ गुफा का निर्माण किया जाता था। प्रो० ए. के. वर्मा ने अपनी यात्रा की रिपोर्ट में कैलाश पर्वत की इस गुफा को ही ऋषभदेव स्वामी का निर्वाण स्थल मानते हुए लिखा है–

No place in the surrounds of the Kailash-Manasarovar region can impact as much as the cave in Mount Kailash itself

and it is no wonder that mystics of various cultural origins retreated to the holy cave. Sri Adinathji could not have been an exception and Ashtapad identified as Mount Kailash itself, the Serdung Chuksum (Saptarishi cave) is where Sri Adinathaji would have attained Nirvana and thus rendering it as the holiest of all Jain Pilgrim sites.

The complex of pyramids around Mt. Kailas

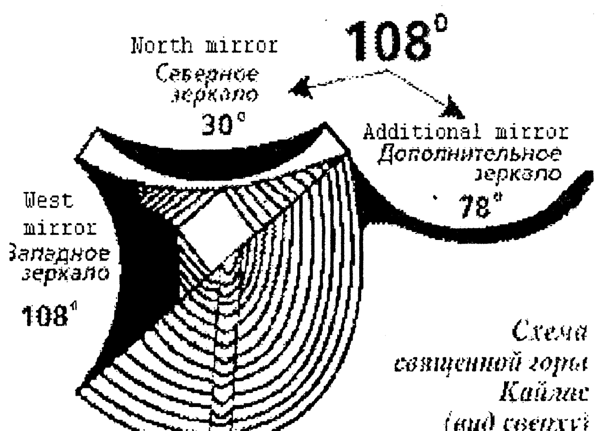

Detailed schema of Mr. Kailas

I believe a first hand experience of the cave is a must for forming any opinion on the most probable site of Nirvana of Sri Adinathaji. I strongly recommend a visit to the cave to any-

one seriously interested. I can conclude based on my convictions that the cave is indeed the site of Sri Adinathaji's Nirvana.

इस संदर्भ में रूस द्वारा एक बहुत महत्त्वपूर्ण खोज की गई है जिसके अनुसार— one of the ideas the Russians have put forward is that Mt. Kailas could be a vast, human-built pyramid, the centre of an entire complex of smaller pyramids, a hundred in total. This complex, moreover, might be the centre of a world-wide system connecting other monuments or sites where para-normal phenomena have been observed.

In shape it (Mount Kailas) resembles a vast cathedral... the sides of the mountain are perpendicular and fall sheer for hundreds of feet, the strata horizontal, the layers of stone varying slightly in colour, and the dividing lines showing up clear and distinct...... which give to the entire mountain the appearance of having been built by giant hands, of huge blocks of reddish stone. (G.C. Rawling, The Great Plateau, London, 1905).

यह रिपोर्ट प्रमाणित करती है कि ऋषभदेव स्वामी के निर्वाण स्थल पर जो स्तूप बना था वहीं आज का कैलाश है।

ऋषभदेव स्वामी के निर्वाण स्थल पर स्तूप निर्माण की जैन शास्त्रों में जो उल्लेख दिये है उसकी पुष्टि Swen Heden के इस वर्णन से होती है जो उन्होंने कैलाश परिक्रमा करते समय डिरापुक गुफा से आगे चलने पर किया है।

The holy ice mountain or the ice jewel is one of my most memorable recollections of Tibet, and I quite understand how the Tibetan can regard this wonderful mountain as a divine sanctuary which has a striking resemblace to a chhorten. The monument which is erected in memory of a deceased saint within or without the temples.

अभी तक जितने भी वर्णन मिले हैं उससे यह स्पष्ट जाहिर है कि कैलाश ही अष्टापद है। डॉ. वेलेजा ने नहीं जानते हुए भी अपनी खोज के निष्कर्ष के अन्त में यह माना है कि कैलाश ही अष्टापद हो सकता है।

"Given the findings set forth in this report Sri Astabad being mount Kailash itself seems the most likely prospect."

अतः इन सब उल्लेखों और निष्कर्षों को देखकर तथा जैन और जैनेतर साहित्य के अध्ययन से स्पष्ट और सर्वसम्मत रूप से यह स्वीकार किया जा सकता है कि अष्टापद पर ही कैलाश का स्तूप है।

यहाँ एक और बात पर आप सब लोगों का ध्यान आकर्षित करना चाहूँगी कि यह कहा जाता है कि मिलारेपा कैलाश पर्वत की चोटी पर तांत्रिक शक्ति से चढ़े थे। उन्हें बौद्धधर्मी कहा गया है लेकिन मिलारेपा बंगाल से गये थे। उन्होंने दिगम्बर रूप में रहकर तपस्या की थी जो बौद्धों में प्रचलित नहीं है। बंगाल में उस समय आजीवक लोग काफी संख्या में रहते थे जो निर्वस्त्र रहते थे तथा नैमितज्ञ होते थे लेकिन उनके नियम निर्ग्रन्थों से शिथिल थे। मेरा यह मानना है कि मिलारेपा आजीवक थे बौद्ध नहीं। तिब्बत में बौद्धों में जो तंत्र-मंत्र साधना का रूप प्रचलित हुआ उसमें आजीवकों का प्रभाव स्पष्ट झलकता है।

सन् 2006 की कैलाश यात्रा के समय तिब्बत में सागा से कैलाश जाते समय रास्ते में गाँव के मकानों के बाहर स्वस्तिक और चंद्रबिन्दु बना हुआ देखा। पूछने पर यह पता चला कि ये प्राचीन परम्परा से चला आ रहा है। स्वस्तिक को एक मंगल चिन्ह के रूप में सभी संस्कृतियों में अपनाया गया है "The Swastik is one of the oldest symbol still existing in history it is a sacred and Prehistoric symbol that pre-dates all formal religons known to human kind, this common heritage of mankind. The connection between almost all devoloped cultures."

इस स्वस्तिक का सबसे प्राचीनतम आधार क्या है यह गहन शोध का विषय है।

जैन परम्परा के बाद बौद्ध धर्म से पूर्व तिब्बत में बौन धर्म प्रचलित था जिनके अनुसार कैलाश A 'Nine Storey' Swastik Mountain" कहलाता हैं।

In Tibetan, Kailash is called 'King Rinpoche', or the precious Mt. The Bon [pron. pein] call it yung drung Gu-tzeg '9-storey swastika' because on the south face of Kailash can be seen a swastika [Skt: self Manifested mark] which, until the 20th century was purely a universal symbol of prosperity, auspiciousness, and rebirth.

गौतमरास में वर्णन है कि अष्टापद पर चक्रवर्ती भरत ने नयनाभिराम चतुर्मुखी प्रासाद निर्मित किया था। श्री धर्म घोष सूरि जी ने भी लिखा है कि भरत चक्रवर्ती ने सिंह निषद नामक चतुर्मुख चैत्य बनाया था और चारों दिशाओं में चार,-आठ, दस, दो के क्रम से चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमाओं की स्थापना की थी। इसी पर्वत पर गौतम स्वामी ने सिंह निषद चैत्य के दक्षिण द्वार से प्रवेश कर पहले सम्भवनाथ, अभिनन्दन स्वामी, सुमतिनाथ, पद्मप्रभु आदि चार प्रतिमाओं को वंदन किया, फिर प्रदक्षिणा देते हुए पश्चिम द्वार से आठ तीर्थंकरों सुपार्श्वनाथ, चन्दप्रभु, सुविधिनाथ, शीतलनाथजी, श्रेयांस, वासपुंज स्वामी, विमलनाथ और अनन्तनाथ को तत्पश्चात् उत्तर द्वार से दस तीर्थंकरों धर्मनाथ, शांतिनाथ, कुन्थूनाथ, अरनाथ, श्री मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत स्वामी, नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और वर्द्धमान महावीर को और फिर पूर्व द्वार से दो तीर्थंकरों अजितनाथ और ऋषभदेव के बिम्ब को वंदन किया। आज भी कैलाश की परिक्रमा इसी रूप में की जाती है। लेकिन बोन्पो धर्म के अनुयायी कैलाश की परिक्रमा पूर्व से प्रारम्भ कर उत्तर पश्चिम तथा अन्त में दक्षिण की तरफ आते हैं। स्वस्तिक का शब्दकोश में अर्थ है चार मार्गों का मिलन या चार प्रकोष्ठ वाला चतुर्मुख प्रासाद या भवन। किसी भी चतुर्मुख महल को रेखाचित्र से दर्शाने पर यह स्वस्तिक आकार का ही दिखेगा। ईसरो के वैज्ञानिक डॉ० पी. एस ठक्कर के अनुसार – कहीं-कहीं अति प्राचीन नगरों और भवनों का आकार स्वस्तिक प्रतीक के आधार पर होता था। वामन पुराण में लिखा है-

ततश्चकार शर्वस्य गृहं स्वस्ति कलक्षणम्
योजनानि चतुः षष्टि प्रमाणेन हिरण्मयम्।।2
दन्ततोरण निर्व्यूहं मुक्ताजालान्तरं शुभम्।
शुद्ध स्फटिक सोपानं वैडूर्य कृतरुपकम्।।3

विश्वकर्मा ने भगवान् शिव के लिये स्वस्तिक लक्षण वाला गृह निर्मित किया था, जो हिरण्यमय था और प्रमाण में चौंसठ योजन के विस्तार वाला था।।2

उस गृह में दन्त तोरण थे और मुक्ताओं के जालों से अन्दर शोभित हो रहा था जिसमें शुद्ध स्फटिक मणि के सोपान (सीढ़ियाँ) थीं जिनमें वैदूर्य मणि की रचना थी।।3

कैलाश यात्रा से आने के बाद इन सारे उल्लेखों को देखने से मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मन्दिर में चावलों द्वारा बनाया गया अर्द्ध चन्द्र सम्यग् ज्ञान चारित्र के प्रतीक के रूप में तीन ढीगली और स्वस्तिक सम्पूर्ण कैलाश क्षेत्र का प्रतिबिम्ब है। मंदिरों में चावलों के सर्वप्रथम परावर्त आकार में अर्द्धचन्द्र बनाते है जो अनन्त का प्रतीक है क्योंकि उसमें अनन्त-अनन्त मोक्षगामी आत्माएँ बसी हैं। इसीलिये इसको सिद्ध शिला का प्रतीक भी माना जाता है। ऋषभदेव के निर्वाण के पश्चात् इन्द्र ने वहाँ तीन स्तूप बनाये थे। पहला भगवान का, दूसरा उनके परिवारिक पुत्र और पौत्रों का, तीसरा अनगारें यानि साधुओं का जिन्होंने ऋषभदेव के साथ सिद्ध गति प्राप्त की थी। इन्हीं तीन स्तूपों को ही हम तीन ढिगली के रूप में बनाते हैं। भरत द्वारा बनाये गये सिंह निषद प्रसाद के प्रतीक के रूप में स्वस्तिक बनाना आज भी हमारी परम्परा में जीवन्त है।

प्रत्येक स्थान विशेष में स्वास्तिक की व्याख्या हमें अलग-अलग रूप में मिलती है। (1) ऋग्वेद की ऋचा में स्वस्तिक को सूर्य माना गया है और उसकी चार भुजाओं को चार दिशाओं की उपमा दी गई है। जिस प्रकार सारे जीव जगत को प्रांण देने वाला सूर्य है उसी प्रकार सारे जीवों में ज्ञान के उद्योगता तीर्थंकर भगवान होते हैं और सृष्टि के चारों दिशाओं में इन्हीं के ज्ञान की दुन्दुभी बजती है।

(2) यास्क के अनुसार स्वस्तिक अविनासी ब्रह्मा का नाम है। आत्मा का स्वरूप अविनासी है इस बात को इसी स्वास्तिक भवन में विराजमान तीर्थंकर सबसे अच्छी तरह समझते हैं और बताते हैं।

(3) अनेक देशों में स्वस्तिक का अर्थ अच्छा या मंगल करने वाले के रूप में माना गया है तीर्थंकरों की वाणी सर्वदा मंगलमय होती है इसलिये स्वस्तिक को मंगल का प्रतीक माना जाता है। कहीं-कहीं स्वस्तिक को अनन्तकाल का प्रतीक और शांति का प्रतीक भी माना गया है। तीर्थंकर अनन्त ज्ञान के स्वरूप होते हैं। चारों गति से मुक्ति दिलाने वाले होते हैं जो स्वयं भी मुक्त होते हैं और सभी को मुक्ति का पथ दिखलाते हैं। चौबीस तीर्थंकरों का क्रम और काल का चक्र हमेशा चलाये मान रहता है। इसी लिये जैन धर्म में स्वस्तिक को चारों गति तथा अनन्तकाल का प्रतीक भी माना गया है। तीर्थंकर ही अहिंसा के, शांति के और मंगल के प्रतीक है कल्याणकारी है। चंदन या रोली से जो हम स्वस्तिक बनाते हैं और उसके चारों खानों में विराजमान 24 तीर्थंकरों के चरणों में ही टीकी लगाकर तीर्थंकरों की पूजा करते हैं। परावर्त में भी टीकी लगाकर सभी सिद्ध आत्माओं की भी पूजा करते हैं। कितना अद्‌भुत है आठ लकीरों से बना हुआ यह आकार, कितने ज्ञान के ज्ञाता होगे भरत महाराज जिन्होंने स्वस्तिक आकार में चौबींस तीर्थंकरों को स्थापित किया, उनको मेरा शत् शत् नमन्। जो भी इन तीर्थंकरों के आराधक रहे वे स्वस्तिक को अपने साथ जहाँ भी गये ले गये अतः पूरे विश्व में स्वस्तिक को सबसे शुद्ध, पवित्र और मंगलकारी माना गया है। 300 ई. पू. सम्प्रति महाराज के काल के सिक्को में भी हमें स्वस्तिक परावर्त और तीन ढ़िगली का रूप चित्रित मिलता है।

कैलाश के नजदीक होने के कारण तिब्बत में जो स्वस्तिक का रूप हमें देखने को मिला उसमें चारों खानों में टीकी लगायी हुई थी। दूरस्थ स्थानों में जिसने जैसे कहा उसे सुनकर और इसका धार्मिक उपयोग देखकर इसे मंगल चिन्ह मान लिया। परिणाम स्वरूप दूरस्थ स्थानों के देशों में टीकी लगाने की परम्परा नहीं है और आकार में सूक्ष्म परिवर्तन देखने को मिलता है। स्वस्तिक को जहाँ-जहाँ जिस रूप में पूजा गया उसको किसी भी तरह से देखे तो हमें स्वस्तिक

आकार में भवन और उसमें चौबीस तीर्थंकर ही विराजमान दिखाई पड़ते हैं। भले ही आज हम तीर्थंकरों की बात भूल गये है लेकिन उनकी स्मृति शान्ति और शुभ, मंगल एवं कल्याणकारी तथा सूर्य के रूप में सारे विश्व में स्वस्तिक के प्रतीक के रूप में जीवन्त है। वैदिक साहित्य में भी स्वस्तिक प्रकार का भवन सिर्फ देवों और राजाओं के लिये उपयुक्त बताया गया है।

कैलाश क्षेत्र के उपग्रह द्वारा लिये गये चित्रों से जो चतुर्मुख स्ट्रक्चर दिखायी पड़ा वह जगह कैलाश पर्वत के पूर्वी छोर में अवस्थित है जो कैलाश का ही एक हिस्सा है। वहाँ का जो नक्शा है उसमें उस जगह का नाम धर्म राजा नरसिंह उल्लेखित है और ये नाम ही हमारे संदेहों का निवारण करके सिंहनिषधा प्रासाद की जगह को चिन्हित करता है। ये भगवान की चिता अग्नि संस्कार की जगह पर बनाये गये स्तूप के पास की भूमि पर भरत चक्रवर्ती द्वारा बनाये सिंहनिषधा प्रासाद की अवस्थिति को दर्शाता है। धर्म राजा, नरसिंह का अर्थ धर्म के राजा अर्थात् सबसे पहले धर्म का प्रवर्तन करने वाले, नरसिंह का स्पष्टीकरण जैन सूत्रों में वर्णित तीर्थंकरों के लिये पुरिस-सीहाणं शब्द जिसका अर्थ पुरुषों में सिंह के समान निर्भीक, पर आक्रमणकारी नहीं होता है। यह तीर्थंकरों का एक विशिष्ट विशेषण भी है। अतः ये दोनों शब्द सिंहनिषधा प्रासाद के अर्थ से मेल खाते हैं निषध शब्द का अर्थ राजा के लिये होता है राजा यानि सर्वश्रेष्ठ। अतः धर्म राजा नरसिंह नाम भरत चक्रवर्ती द्वारा अष्टापद पर निर्मित सिंहनिषधा प्रासाद को ही दर्शाता है।

ईसरो के विज्ञानिक डॉ. पी.एस. ठक्कर ने उपग्रह से लिए चित्रों के आधार पर अष्टापद की खोज पर अपनी रिपोर्ट में लिखा है—

According to Dr. P.S. Thakkar from the description found in the literature compiled by New York Jain centre, it is believed that there are eight places where possibility of Ashtapad Mountain and Ashtapad Maha Tirth is there. Probable locations of Ashtapad Mountain and Ashtapad Maha Tirth are as under :

1) Kailash
2) Barkha plains
3) Ashtapad near Tarboche
4) Nandi Parvat
5) Ashtapad mountain between Gyandrag monastery and Serlung Gompa
6) Gyandrak or gangta monastery and hill ock to the north of it
7) 13 Drigung at the base of Kailash
8) Trinetra or Gombo phang

According Dr. Shah's report one can see that all the travel agents talk and take you to a different place for Ashtapad. A traveler-out of hardship of local conditions of three days for Kailash parikrama-believes what he is told-will like to visit-see and worship-par respect to Ashtapad. He knows very little about Ashtapad, but just out of desire and wish to visit Ashtapad, he wants to walk or drive to one of the locations-whatever travel agents takes him. As he does not know the local language-he can not talk to any body-or ask any body or read any local information around. Travel agents are there to make money . . . so whatever place a travel agent takes you, one should not take for granted this is Ashtapad.

Again I tried to analyze the image in the light of this new reference and found a rectangular/square structure on the image at this new location and when referred the contour map I was having with me, to my utter surprise I found the name of the place as Dharma king Norsang. Looking at the meaning of the word I was sure that was mostly near the target. I submitted second interim report to Dr. Rajnikant Shah.

Before preparing this final report when I saw the same interpretation by some one else, it was confirmed that my assumption was right (vol. III pp. 812).

Later on I was looking at the description given by Swami Anand Bhairav Giri, which does not match with any of the other eight sites found in literature but it perfectly matches with this newly discovered site of probable location of Ashtapad i.e. Dharma king Norsang.

Anand Giri writes . . . "I started at 6.00 o'clock (Indian time) from the Tarboche . . . I reached at Gangta Gompa at 8.00 o'clock and met two lamas over there. I approached lamas with folded hand for Ashtapad prikrama . . . After crossing 2 peaks towards west, we reached Serlung Gompa crossing the chhuksam chhu . . . left for Ashtapad, on the right side is Chhuksam chhu, in left Ravana Parvat. Just opposite of Ravana Parva, big flag (Maha Dhwaja) and Nyanri Gompa. On the peak of Ravana Parvat, a big beautiful Shivaling is there . . . I came across the dangerous climbing and reached just below the ladder looks in Kailash where the heap of snow is stagnant. While crossing this stagnant snow range . . . here after the entire route was climbing, tough and dangerous. We crossed it and reached Ashtapad cave."

The site located by me with the help of aerial photograph, (commercially available in poster form at Kathmandu), trekking map and satellite data, is known as Dharma king Narsang. The name also indicates the place of Shiva or Adinath or Rishabh dev as it indicates Dharma King means king of religion and Narsang means like a lion in human beings. Thus place name also indicates the place of Ashtapad that of Adinath or

Rishabhdev or Shiva. There is a trench surrounding the proposed Ashtapad, which also supports my assumption.

One can refer fig. 11 & 21 which are taken from vol. IV part I pp.no. 1170, this figure shows that Dharma king norsang is part of Mount Kailash, it remains covered by snow, hence name Dhavalgiri or Kailash itself are matching with this probable site and supports the belief of Kailash itself and described as Dhavalgiri in literature. **Thus there is no stand for the other eight claimants of Ashtapad any more as Ashtapad Mountain or Ashtapad Maha Tirtha.**

The site located using satellite data, the Dharma king Norsang seems nost appropriate for the site of Ashtapad Mountain or Ashtapad Maha Tirtha.

जिस तरह कैलाश का सभी धर्मों में महत्वपूर्ण स्थान है उसी प्रकार आदि तीर्थंकर ऋषभदेव की मान्यता भी सभी संस्कृतियों और धर्मों में हमें प्राप्त होती हैं। उनका निर्वाण अष्टापद पर हुआ था। जैन आचार्यों ने कैलाश और अष्टापद को एक ही माना है। आचार्य जिनसेन ने अपने पुराण में अष्टापद का कैलाश के रूप में उल्लेख किया है—

अनुगंगातटं देशान् विलंघय ससरिद्गिरीन्।
कैलासशैलसान्निध्यं प्रापतच्चक्रिणो बलम्।।11

कैलासाचलमभ्यर्णमथालोक्य रथांगभृत्।
निवेश्य निकटे सैन्यं प्रययौ जिनमर्चितुम्।।12

चक्रवर्ती की वह सेना गंगा नदी के किनारे-किनारे अनेक देश, नदी और पर्वतों को उल्लंघन करती हुई क्रम से कैलाश पर्वत के समीप जा पहुँची।।11

तदनन्तर चक्रवर्ती ने कैलाश पर्वत को समीप ही देखकर सेनाओं को वहीं पास में ठहरा दिया और स्वयं जिनेन्द्र भगवान् की पूजा करने के लिये प्रस्थान किया।।12

कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य ने भी कैलाश का नाम अष्टापद बताया है। इसके अलावा श्री सहजानन्दजी महाराज तथा स्वामी आनन्द भैरव गिरि के उल्लेखों में भी कैलाश और अष्टापद एक ही है ऐसा परिलक्षित होता है। पुराणों के अनुसार भी ऋषभदेव का निर्वाण स्थल कैलाश है। नागपुराण में स्पष्ट लिखा है—

कैलासविमले रम्ये ऋषभोयं जिनेश्वरः।
चकार स्वावतारं यो सर्वः सर्वगतः शिवः।। —श्री नागपुराण

स्कन्ध पुराण के अनुसार—

कैलाश पर्वते रम्ये वृषभों यं जिनेश्वर
चकार स्वारतारं यः सर्वज्ञ सर्वगः शिवः

—स्कन्ध पुराण कौमार खण्ड अ0 37

कैलाश के साथ-साथ आदि तीर्थंकर ऋषभदेव की मान्यता सभी प्राचीन परम्पराओं में समानरूप से मिलती हैं। मिस्र की सभ्यता, मैसोपोटानिया की सभ्यता, यूनान, चीन एवं सिन्धुघाटी की सभ्यता में ऋषभदेव को किसी न किसी रूप में पूजा गया है।

There is authentic evidence to prove that it was the Phoenicians who spread the worship of Rishabha in Central Asia, Egypt and Greece. He was worshipped as 'Bull God' in the features of a nude Yogi. The ancestors of Egyptians originally belonged to India. The Phoenicians had extensive cultural and trade relation with India in the pre-historic days. In foreign countries, Rishabha was called in different names like Reshef, Apollo, Tesheb, Ball, and the Bull God of the Mediterranean people. The Phoenicians worshipped Rishabha regarded as Appollo by the Greeks. Reshef has been identified as Rishabha, the son of Nabhi and Marudevi, and Nabhi been identified with the Chaldean God Nabu and Maru Devi with Murri or Muru. Rishabhadeva of the Armenians was undoubtedly Rishabha, the First Thirthankara of the Jains.

कैलाश और ऋषभदेव के विषय में इन सब प्रमाणों के सन्दर्भ में यह जिज्ञासा होना स्वाभाविक है कि उनका समय क्या था? विभिन्न दार्शनियों ने समय समय पर इस सन्दर्भ में विभिन्न विभिन्न प्रकार के मत दिये है। वैज्ञानिकों, पुरातत्व वेदों, भूगर्भ शास्त्रियों ने अपने अध्ययन से भिन्न भिन्न निष्कर्ष निकाले। लेकिन दुर्भाग्य वश अभी तक हम इतिहास के उस काल को खोलने में सक्षम नहीं हो पाये हैं। जिस प्रकार साहित्य में ऋषभदेव का काल लाखों वर्ष पूर्व मिलता है। उसी प्रकार ब्रह्म, विष्णु, शिव की आयु का वर्णन भी लाखों सौर वर्ष में किया गया है। यह सही है कि इस धार्मिक मान्यता पर हमारी आस्था और विश्वास है। लेकिन वर्तमान इतिहासकारों ने तार्किक दृष्टि से जो विश्लेषण दिया है एवं पुराणों में जो राजाओं की वंशावली मिलती हैं उसके अनुसार ऋषभदेव का समय सिन्धुघाटी सभ्यता के प्रथम चरण यानि आज से नौ-दस हजार साल पहले का माना जाता है।

वर्तमान Ice Age की समाप्ति आज से ग्यारह हजार छः सौ वर्ष पूर्व हुई जब बर्फ के ग्लेशियर पिघले और समुद्र का स्तर बढ़ गया और पृथ्वी जलमग्न हो गयी। यहीं वह समय था जब सभी प्राचीन संस्कृतियाँ विकसित हुई। पुराणों के अनुसार स्वयंभू, मनु जिनके दो पुत्र थे। प्रियवत् और उत्तानपात। प्रियव्रत् के दस पुत्र हुए जिसमें आग्निध्र को जम्बूद्वीप मिला। आग्निध्र के नौ पुत्रों में सबसे बड़े पुत्र नाभि को हिमवर्ष (हिमालय मिला) नाभि के पुत्र ऋषभदेव थे। जो परम ज्ञानी थे। ऋषभदेव के पुत्र महाप्रतापी भरत थे जिनके नाम से हिमवर्ष का नाम भारत पंड़ा। प्रियव्रत् शाखा में पैतीस प्रजापति और चार मनु हुए। उत्तानपात शाखा में छब्बीसवां प्रजापति तथा छठा मनु चाक्षुक हुआ।

इतिहासकारों के अनुसार पाषाण युग के बाद धातु युग का प्रादुर्भाव हुआ और धातु युग का आरम्भ ताम्र युग से होता है। कुछ विद्वानों ने माना है कि नव पाषाण युग के समय कृषि का अविष्कार हुआ। जब सरस्वती नदी के तट पर उन्हें ताँबा मिला तो वे पत्थर के हथियार छोड़ ताँबें का प्रयोग करने लगे। ताम्र युग के चिन्ह सरस्वती नदी के सूखे मार्गों चाँदू डेरों तथा बिजनौत आदि स्थानों पर प्राप्त हुए है। मैसोपोटानियों में

यहीं प्रोटाइलामाइट सभ्यता कहीं गयी है। प्रसिद्ध पुरातत्वविद् डॉ0 डी. टेरा सिन्धु प्रदेश की सभ्यता को पत्थर और धातु युग की संगम मानते हैं। ताम्र के बाद काँसे की सभ्यता आयी जिसके अवशेष सुमेरियन सभ्यता में मिले हैं। जो प्रोटोइलामाइट सभ्यता के बाद विकसित हुई। प्रोटोइलामाइट सभ्यता के अवशेषों और सुमेरियन काँसे के सभ्यता के स्तरों के बीच बाढ़ के पानी के द्वारा जमीं चिकनी मिट्टी का चार फुट मोटा स्तर प्राप्त हुआ है। जिसके बारे में यह कहा गया है कि यह स्तर उस बाढ़ से बना है जिसे प्राचीन ग्रन्थों में नुहूं की प्रलय कहते हैं। इस प्रलय के बाद जो काँसे की सभ्यता वाली जाति यहाँ आयी वह सुमेरू कहलाती हैं। सिन्धु के आमरी प्रदेश की खुदाई से निकले अवशेषों से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रोटोइलामाइट सभ्यता और सिन्धु घाटी की सभ्यता एक ही है। कुछ विद्वानों के अनुसार प्रोटोइलामाइट सभ्यता का मूल भारत की चाक्षुस जाति थी। जो यहाँ विकसित होकर विलोचिस्तान और इरान होते हुए मैसोपोटामिया में स्थापित हुई।

भूगर्भ विशेषज्ञ मेडलीकान्ट, बलैन्फई, लैम्सबर्ग तथा नाइजीरिया के जिओलाजी के प्रो0 एल बी हौलस्टीड आदि ने हिमालय को ही मानव सभ्यता का उद्‌गम केन्द्र माना है। पार्टियर ने तो लिखा है कि कैलाश के निकट ही मानव सभ्यता का प्रारम्भ हुआ।

भारत के पश्चिमी तट पर भी खोजों से जो अवशेष मिले हैं वह भी नौ-दस हजार साल पुराने माने गये हैं तथा हडप्पा की सभ्यता से साम्य रखते हैं। मेहरानगढ़ की खुदाई से मिले अवशेषों में सिन्धुघाटी की सभ्यता को नौ हजार वर्ष तक पहुँचा दिया है। चीन की सभ्यता भी लगभग दस हजार वर्ष पुरानी कहीं जाती हैं।

अभी तक की गई खोजों से एक बात और सामने आता है कि खेती का प्रारम्भ आज से नौ हजार वर्ष पूर्व हुआ था। जैन साहित्य के अनुसार ऋषभदेव ने ही कृषि का ज्ञान लोगों को दिया था। इस विषय में कर्नल टॉड ने भी लिखा है। प्रसिद्ध इतिहासकार पी. सी. राय चौधरी ने ऋषभदेव का समय पाषाण युग के अन्त और कृषि युग का प्रारम्भ बताया है। आर. पी चन्द्रा, विलास सांगवे, हेनरी जिम्मर, मार्शल थॉमस

मैकेवली ये सभी विद्वान सिन्धुघाटी सभ्यता से ऋषभदेव को सम्बन्धित करते हैं जिसका प्रमाण टेराकोटासील और दूसरे अवशेष है जो हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से हमें प्राप्त है। श्री बी. डी आर देशमुख ने लिखा है कि जैनियों के प्रथम तीर्थंकर सिन्धु घाटी सभ्यता से थे।

Christopher Key Chappel, quoting many scholars, provides the following evidences connecting Rsabha with Indus Valley civilisation.

1. Seal 420, unearthed at Mohenjodaro portrays a person with 3 or possibly 4 faces. Jain inconography frequently depicts its tirthankaras with four faces, symbolizing their missionary activities in all four directions.

2. Another seal depicts seven persons in upright position with arms somewhat hanging somewhat stiffly and held slightly away from the sides of the body which McEvilley correlates with the Jaina Kayatsarga pose, the posture in which the very first Tirthankara, Rshabha, is said to have entered kevala. While this can be interpreted in may ways, Richard Lannoy however does see Jaina influences on this seal : "That of a nude man represented as a repeat-motif in a rigidly upright position, legs slightly apart, arms held paralled to the sides of his body, which recurs as a Jaina tirthankara, repeated row upon row.

3. Depictions of a bull appear repeatedly in the artifacts of the Indus Valley, Lannoy, McEvilly, and Padmanabh Jaini all have suggested that the abundant use of the bull image in the Indus Valley civilization indicates a link with Rsabha, the first of the twenty four Tirthankaras, whose companion animal is the bull.

सिन्धु सभ्यता में रामायण और महाभारत के कोई अवशेष नहीं मिले हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि रामायण और महाभारत काल सिन्धु घाटी के बाद का है।

जैन साहित्यानुसार यह सृष्टि अनादि और अनन्त है। तीर्थंकरों की अनन्त चौबीसियाँ हो चुकी है और होगी। जिस प्रकार दिन और रात मिलाकर चौबीस घंटे होते हैं उसी प्रकार एक अवसर्पिणी और उपसर्पिणीकाल बारह-बारह हजार वर्ष का माना जा सकता है। शायद इसीलिये राशियाँ भी बारह कहीं गयी है। Chinese और Western, Zodiac में भी बारह प्रतीक हैं। Chinese साहित्य में भी बारह साल के साइकिल का विवरण दिया हुआ है। छः ऋतुओं के अनुसार प्रत्येक काल में छः आरे बताये गये हैं। वर्तमान अवसर्पिणीकाल की संस्कृति की प्राचीन परम्परा के वाहक ऋषभदेव थे। इसीलिये उनको आदिनाथ भी कहा गया है।

श्री राजमहलजी जैन ने बीजिंग के मन्दिर में जैन तीर्थंकरों की मूर्तियाँ देखी हैं। इस सन्दर्भ में मैं बताना चाहूँगी कि चीनी सूत्रों में हमें जैन तीर्थंकरों के नाम भी मिलते हैं। चीन के लोग अपनी उत्पत्ति भारत से हुई ऐसा मानते हैं। लगभग तीन हजार ईसवीं पूर्व भारत से एक दल व्यापार के लिये चीन गया था उसने अपने उपनिवेश वहाँ बसाये थे। ड्रागेन जो वहाँ का राष्ट्रीय प्रतीक है उसका सीधा सम्बन्ध नाग जाति से है जो तीर्थंकरों का प्रतीक है। कर्नल टॉड ने लिखा है चीनी लोग आदिनाथ और नेमिनाथ को औडीन और फो के नाम से पूजते हैं।

जैन साहित्यनुसार ऋषभदेव के उपदेशों को संकलित कर उनके पुत्र भरत चक्रवर्ती ने वेदों का निर्माण किया था जिसका श्रुत रूप में धारण तथा संरक्षण करने वाले शुद्ध रूप में ब्राह्मण कहलाते थे। उसके बाद जब ब्राह्मणों में दुराचारिता का प्रारम्भ हुआ तो कुछ भ्रष्ट ब्राह्मणों ने अपने अस्तित्त्व की रक्षा के लिये वेदों में परिवर्तन कर अपने तरीके से प्रस्तुत करना प्रारम्भ कर अज्ञान मनुष्यों को विभ्रान्ति में डालना शुरु कर दिया। श्रमण संस्कृति में क्षत्रिय ज्ञानवान और प्रजापालक होते थे। जिनके विरुद्ध ब्राह्मणों ने वेदों में परिवर्तन कर एक मुहिम छेड़ी जिसका प्रमाण परशुराम द्वारा पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन करना था जो इसी षड्यन्त्र का एक हिस्सा था। वेदों के अर्थ के विषय में सन्देह और अज्ञानता को भगवान् महावीर ने दूर कर गणधर गौतम को वेद के श्लोकों का सही

अर्थ बताया था। अन्तिम तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर के संदेश हमारे लिये बहुत ही महत्वपूर्ण है। उन्होंने ऋषभदेव और अन्य 22 तीर्थंकरों के विषय में बताया था और सभी प्राचीन संस्कृतियों में उनके प्रमाण भी हमें मिले है। यद्यपि इसमें अभी और भी काफी खोज करने की आवश्यकता है। भगवान् महावीर के समय तथा उसके पश्चात् जो बड़े सम्राट हुए जैसे अजात्शत्रु, उदायी, राजानन्द, चन्द्रगुप्त मौर्य, अशोक, सम्प्रति तथा महामेघवाहन खारवेल श्रमण संस्कृति के रहे है। इन जैन धर्म राजाओं का बहुत ही गौरव पूर्ण इतिहास रहा है। ब्राह्मण साम्राज्य के संस्थापक पुष्यामित्र शुंग को खारवेल ने दो बार पराजित किया था जिसका स्पष्ट प्रमाण उदयगिरी और खण्डगिरी के शिलालेख हैं। लेकिन खारवेल को भारतीय इतिहास में कोई स्थान क्यों नहीं दिया गया। इसका कारण वह सनातन संस्कृति जो ऋषभदेव से चली आ रही है उसको विकृत करने का प्रयास किया जा रहा है। इतिहासकार यह नहीं समझ पा रहे है कि ऐसा करके वो अपने देश को गौरव विहीन बना रहे हैं। अपनी गलत बात को सही ठहराने के लिये विदेशी ठप्पा लगवाकर प्रस्तुत करने की जो उनकी मानसिकता है जिसका फायदा विदेशी ताकते उठा रही हैं, भारतीय संस्कृति को खोखला करके। यह समझकर उनसे बचकर अपने गौरव को पुनः स्थापित करे। इस विषय में हमारे वर्त्तमान राष्ट्रपति डॉ. कलाम को मिसाइल वैज्ञानिक Dr. A. Sivathanu Pillai का लिखा पत्र मेरे इस कथन को और भी पुष्ट बनाता है जिसमें उन्होंने लिखा है-

"Other countries preserve their history well. Here, we need a certificate from the west to show off what is originally ours. Its time to be proud of our heritage and rewrite the text books". (Telegraph page 6, 24 July 2006.)

अपने गौरव को पुनः स्थापित करने के लिए हमें अपनी संस्कृति और सभ्यता के आदि स्रोत के गौरव तक पहुँचना होगा और अष्टापद की खोज संस्कृति के आदिस्रोत के उद्गम स्थल को प्रत्यक्ष करने का महत्त्वपूर्ण आधार बन सकती है।

हे पृथ्वीनाथ विराज रहे है अष्टापद पर,
————— हे आदिनाथ

देकर आत्मज्ञान का पाठ, बन गये आप जगत् नाथ,
पूरब से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण
चहु ओर फैला आपके ज्ञान का प्रकाश
हे प्रकाशनाथ विराज रहे है अष्टापद पर,
————— हे आदिनाथ।

नमन करती हूँ मैं आपको शत् शत् बार
पार लगाना मुझको यही है विनती बारं बार
पथ पर चल तुम्हारे तुमको पा जाऊं मैं.
हे मुक्ति नाथ विराज रहे है अष्टापद पर
————— हे आदिनाथ।

ऐसा विश्वास दिल में जमाते चलो
सिद्ध, अरिहन्त को मन में रमाते चलो,
वक्त आयेगा ऐसा कभी न कभी
सिद्धि पायेंगे हम भी कभी न कभी।

KUSUM CHANACHUR

Founder : Late. Sikhar Chand Churoria

Our Quality Product of :

Anusandhan
Kolkata Nasta
Badsha Khan
Picnic
Raja
Shubham
Bhaonagari Ghantia
Jocker
Lajawab
Papri Ghantia
Rim Jhim
Tinku

MANUFACTURED BY

M/s. K. K. Food Product
Prop. Anil Kumar, Sunil Kumar Churoria
P. O. Azimganj, Dist: Murshidabad
Pin No.- 742122, West Bengal
Phone No.: 03483-253232,
Fax No.: 03483-253566

KOLKATA ADDRESS:

36, Maharshi Debendra Road, 3rd Floor Room No.- 308
Kolkata - 700 006, Phone No.: 2259-6990, 3293-2081
Fax No.: 033-2259-6989, (M) 9434060429, 9830423668

TITTHAYARA
Vol XXXVI No.01
25th April 2012

Registered
No. KOL.RMS / 070/2010-12
R.N.I. 30181/77

Creators of Prestigious Interiors
Established 1970

Creativity is a Modern Religion

Nahar

Architects . Interiors . Consultants

5B, Indian Mirror Street, Kolkata-700013
Phone No.-2227 5240/45, Fax :22276356
Email Id:info@nahardecor.com